पाठ 1 : भारोपीय परिवार

1. भारोपीय परिवार की भाषाओं की ऐतिहासिक रूपरेखा।

1. प्रस्तावना :-

संसार में कुल लगभग तीन हजार भाषाएँ बोली जाती हैं। इन में बहुत -सी भाषाएँ पारिवारिक रूप में परस्पर सम्बद्ध हैं। ध्वनि, व्याकरण तथा शब्द समूह के तुलनात्मक अध्ययन-विश्लेषण के आधार पर एवं भौगोलिक निकटता के आधार पर भाषाओं के पारिवारिक संबन्धों का निर्णय किया गया है। इस समय संसार में मुख्यतः कुल बारह-तेरह परिवार हैं - द्रविड, चीनी, सेमेटिक, डेमेटिक, आग्नेय, यूराल, अल्टाइक, बांटू, अमीरीकी कोरियाई तथा (रेड-इण्डियन), काकेशस, सूडानी, बुशमैन, जापानी-भारोपीय हिन्दी का सम्बन्ध भारोपीय परिवार से ही है।

2. मूलस्थान तथा नाम :-

भारोपीय परिवार प्रधानतः भारत तथा यूरोपीय अथवा संक्षेप में भारोपीय परिवार कहलाता है। इस परिवार की भाषाओं के बोलनेवाले मूलतः कहाँ के थे, इस विषय पर बडा विवाद है। कुछ लोग इन्हें मूलतः भारत का मानते हैं, तो कुछ मध्य एशिया का; कुछ लोग यूरप का; तो कुछ लोग यूरोप-एशिया की सीमापर किसी स्थान का। आजकल सर्वाधिक मान्यता ब्रन्देश्ताइन की है।

इस परिवार को समय-समय पर 'इण्डो्-जर्मनिक', 'इण्डो-के ल्टिक','आर्य', आदि नामों से अभिहित किया गया है। अब 'भारोपीय' (इंडो-यूरोपियन) नाम ही प्रचलित है। यह भाषा निम्न ध्वनियों से बनी है -

(क) स्वर तथा (ख) व्यंजन

(क) स्वर :-

स्व : अ, इ, उ, ऋ, लृ, ऍ, ऑं, नॅं, मॅं

दीर्घ : आ, ई, ऊ, लृ, ए, ओ, न, म

(ख) व्यंजन :-

कंठ्य तालव्य :- कृ, ख, ग, घ, ङ (य-युक्त)

कंठ्य जि ह्वामूलय :- क, ख, ग, घ, ङ

दन्त्य : त, थ, द, ध, न

ओष्ठ्य : प, फ, ब, भ, म

कंपनजात : तालव्य : र

पार्श्विक : दन्त्य : ल

ऊष्म : दन्त्य : स, ज़

सन्दिग्ध ध्वनियाँ :-

संघर्षी : ह, ह़, थ़, द़, ख़, ग, झ

3. व्याकरण :-

(क) मूल भारोपीय भाषा का व्याकरण अत्यन्त जटिल था, बहुत अधिक रूप थे और अपवादों की संख्या भी अधिक थी।

(ख) संज्ञा के रूप आठ थे, जो प्रत्ययों एवं अपश्रुति की सहायता से बनते थे।

(ग) लिंग तीन थे - पुंलिंग, स्त्री लिंग और नपुंसक लिंग।

(घ) वचन तीन थे - एकवचन, द्विवचन और बहुवचन।

(ङ) दस ऊँगलियों से गणना आरम्भ करने के कारण संख्याओं की दशमलविक प्रणाली थी जैसे - 10, 100, 1000 आदि।

(च) क्रिया में -

तीन वचन थे - एक, द्वि और बहु

तीन पुरुष थे - उत्तम, मध्यम और अन्य

दो पद थे – आत्मनै और परस्मै

काल एवं क्रियार्थ (Mood) का बोध न था।

वाच्य केवल एक था – कर्तृवाच्य ।

कर्मवाच्य का विकास बहुत बाद में हुआ।

निश्चयार्थ, आज्ञार्थ, सम्भावनार्थ, आदरार्थ–आज्ञार्थ, और विध्यार्थ एवं चार काल और बाद में आये।

(छ) क्रिया की विशेषता दर्शित करने के लिए स्वतन्त्र शब्दों का प्रयोग होता था। वे ही आगे चलकर उपसर्ग हुए।

(ज) आज अव्यय कहे जाने वाले शब्द भी, मूल भारोपीय परिवार के थे।

4. शब्द - समूह :-

भारोपीय भाषा के अपने शब्द थे। अन्य भाषाओं से भी अनेक शब्द उस में आ गये थे।

उदा :- सुमेरी भाषा से 'गुद' → अंग्रेजी e ow, संस्कृत गौ और हिन्दी गाय।

उरुदु → संस्कृत लौह और हिन्दी लोहा।

5. शाखाएँ :-

भारोपीय परिवार में 'स', 'श', आदि ध्वनियों से बने शब्दों का 'सतम' और 'का' से बने शूब्दों को 'केतुम' कहा गया है।

सतम वर्ग	केतुम वर्ग
अवेस्ता सतम्	लैटिन केतुम्
संस्कृत शतम्	ग्रीक हेक्तोन
फारसी सद	पुरानी आयरिश केत्
लिथुआनियन शितम् रूसो स्तो	तोखारियन कन्ध
बल्गेरियन सुतो	इतालवी केतो

6. भारत- ईरानी :-

भारोपीय शाखा 'आर्यशाखा' कहलाती है। भारतीय और ईरानी भी अपने को आर्य कहते है। इसका अवेस्था-रूप 'अइर्य' (airya) है और बहुवचन रूप 'अइर्यन' (airyana) है। 'आइर्यन' शब्द से 'एरान' (Eran) और उससे 'ईरान' शब्द विकसित हुए। अत: 'आर्य' नाम 'भारत - इरानी' के लिए बहुत उपयुक्त है।

भारत – ईरानी लोग अपने मूल–लस स्थान से चलकर प्रथमत: ओक्स घाटी के पास आये। वहाँ से एक वर्ग ईरान चलाया, दूसरा कश्मीर तथा आस पास एवं तीसरा भारत। ग्रियर्सन के अनुसार भारत–ईरानी की तीन शाखाएँ हैं – भारतीय, ईरानी और दरद।

परम्परागत शब्दे – समूह के अतिरिक्त, भारत – ईरानी भाषाओं में सम्पर्क संस्कृतियों के शब्द दिखाई देते हैं।

उदाहरणार्थ :-

असीरियन 'असुर' शब्द संस्कृत में ' असुर' तथा 'सुर' शब्दों से लिया गया है। 'मन' शब्द वस्तुत: असीरी है। वैदिक संस्कृत में वह 'मना' और 'मिनह' रूपों में आया है। फिनो–उग्रिक लोगों के संपर्क से भारत– ईरानी भाषा में सत (100),असुर, वज्र, वराह आदि शब्द आये और उन्होंने कफ, कूप (कुआँ), शलाका, एक (1) आदि शब्द लिये।

इस प्रकार भारत – ईरानी की तीन शाखाएँ हुईं –

(क) ईरानी :-

इसके अन्तर्गत प्राचीन फारसी, अवेस्ता, पहलवी, फारसी आदि भाषाएँ आती हैं।

(ख) दरद :-

इसके अन्तर्गत कश्मीरी, शिणा, चित्राली आदि भाषाएँ आती हैं।

(ग) भारतीय -

इसके अन्तर्गत भारतीय आर्य भाषाएँ– नेग्रिटो, ऑस्ट्रिक, किरात, द्रविड, संस्कृत, पालि, प्राकृत आदि आती हैं।

उद्भव हुआ।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौलाअली

पाठ 2 : भारतीय आर्यभाषाओं का विवरण

प्र.1. 'संस्कृत' भाषा के (मूल) तथा विकास का विवरण दीजिए।

प्रस्तावना :-

भारतीय आर्यभाषा का प्राचीनतम रूप वैदिक संहिताओं में मिलता है। इन संहिताओं की भाषा में एकरूपता नहीं है। यह काव्य- भाषा होने के कारण तत्कालीन बोलचाल की भाषा से कुछ भिन्न है। उस समय तक आर्यों का केन्द्र सप्तसिन्धु या आधुनिक पंजब था। ब्राह्मणों- उपनिषदों की भाषा संहिताओं के बाद की है। इस में उतनी जटिलता नहीं है। इनके गद्यभाग की भाषा तत्कालीन बोलचाल की भाषा के बहुत निकट है। भाषा का और विकसित रूप सूत्रों में मिलता है। पाणिनि ने अपने व्याकरण में भाषा को अपेक्षाकृत अधिक परिनिष्ठित किया। पाणिनि की रचना के बाद बोलचाल की भाषा पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, आधुनिक भाषाओं के रूप में विकास करती आज तक आयी है। रामायण- महाभारत की भाषा पाणिनी के बाद की है। फिर कालिदास से होते क्लैसिकल संस्कृत, हितोपदेश तक तथा और आगे तक आयी है। इस प्राचीन आर्यभाषा के वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत दो रूप मिलते हैं।

1. वैदिक संस्कृत (1500 ई.पू. से 800 ई.पू. तक)

रूपरेखा :-

वैदिक संस्कृत वैदिक संहिताओं, ब्राह्मणों, आरण्यकों तथा प्राचीन उपनिषदों आदि में मिलता है।

(क) ध्वनियाँ :-

मूलस्वर : ऊ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ

संयुक्त : ए, ऐ, ओ, औ

व्यंजन : क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, ह, ळ्, ळ्ह।

विसर्ग, जिह्वामूलीय तथा उपध्मानीय ह के उपस्वनिम थे।

स्वराघात :-

मूल भारोपीय भाषा में स्वराघात बहुत महत्त्वपूर्ण था। भारत-ईरानी स्थिति में अनुदात्त भी विकसित हुआ। संस्कृत को परम्परागत रूप से विकसित हुआ। संस्कृत को परम्परागत रूप से अनुदात्त, उदात्त, एवं स्वरित तीन प्रकार के स्वराघाकत (संगीतात्मत) प्राप्त हुए। बिना स्वराघात के वैदिक छन्दों को पढ़ना अशुद्ध माना जाता है। स्वराघात के कारण शब्द का अर्थ भी बदल जाता है।

उदा :-

'इन्द्रशत्रु' शब्द को लेलें।

इन्द्र/ शत्रु = जिसका शत्रु इन्द्र है (बहुव्रीहि)

इन्द्र शत्रु = इन्द्र का शत्रु (तत्पुरुष)

अत: शब्द आदि के अर्थ जानने में स्वराघात का अधिक महत्त्व है। स्वराघात में परिवर्तन से कभी-कभी लिंग में भी परिवर्तन हो जाता है। टर्नर के अनुसार, वैदिक संस्कृत में संगीतात्मक एवं बलात्मक दोनों ही स्वराघात हैं।

(ख) रूप - रचना :

वैदिक भाषा में तीन लिंग थे - पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसक लिंग। तीन वचन थे - एक, द्वि और बहु, कारक विभक्तियाँ आठ थीं: कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण और सम्बोधन विशेषणों के रूप भी संज्ञाओं की तरह चलते थे। मूल भारोपीय में सर्वनाम के मूल या प्रतिपादक बहुत अधिक थे। विभिन्न बोलियों में कदाचित विभिन्न मूलों के रूप चलते थे। मूलत: विभिन्न मूलों से बने रूप एक ही मूल के रूप माने जाने लगे। उत्तम पुरुष का 'अस्मद' सभी रूपों का मूल माना जाता है। यदि ध्यान से देखे जाय -

अह - अहम

म - माम, मया, मम, मयि

आव - आवम्, आवाम्, वाम्, आवयो:

वय - वय

अस्म - अस्माभि, अस्मभ्यम्, अस्मे

आदि मूलों पर भी आधारित रूप हैं। मध्यम आदि अन्य सर्वनामों में भी एकाधिक मूल हैं। वैदिक भाषा में धातुओं के रूप आत्मने तथा परस्मै, दो पदों में चलते थे। क्रिया पद तीनों वचनों (एक, द्वि, बहु) एवं तीनों पुरुषों, (उत्तम, मध्यम, अन्य) में होते थे। काल तथा क्रियार्थ मिलाकर क्रिया के - लट्,लङ्, लिट्, लुङ्, लुट्, निश्चयार्थ, संभावनार्थ (लेट्), विध्यर्थ, आदरार्थ, आज्ञार्थ तथा आज्ञार्थ (लोट) कुल ग्यारह प्रकार के रूपों का प्रयोग मिलता है। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में लेट् का प्रयोग बहुत मिलता है। किन्तु धीरे-धीरे इसका प्रयोग कम होता गया और अन्त में लौकिक संस्कृत में पूर्णत: समाप्त हो गया। वैदिक में भविष्य के रूप बहुत कम हैं।

(ग) समास :-

समास रचना की प्रवृत्ति मूल भारोपीय एवं भारत-ईरानी में थी। वहीं से यह परम्परा वैदिक संस्कृत में आयी। वैदिक समस्तपद प्राय: दो शब्दों के ही मिलते हैं। वैदिक में तत्पुरुष, कर्मधारय, बहुव्रीहि एवं द्वन्द्व, ये चार ही समास मिलते हैं। लौकिक संस्कृत के शेष दो समास बाद में विकसित हुए हैं।

(घ) शब्द :-

वैदिक भाषा में

(1) तद्भव या मूलशब्द से विकसित शब्द प्रयक्त होनो लगे। वेद में 'इह' (यहाँ) शब्द इसी प्रकार का है। इसका मूलशब्द 'इध' है। पालि 'इधों' और अवेस्ता 'इद' इसी बात के प्रमाण हैं कि महाप्राण व्यंजन के स्थान पर 'ह' के विकास से 'इध' से ही 'इह' बना है।

(2) अनेक आर्येतर शब्दों का आगमन इसकाल में भाषा में होने लगा है। उदाहरण के लिए वैदिक भाषा में अणु, अरणि, कपि, काल, गण, नाना, पुष्कर, पुष्प,मयूर, अटवी, तंडुल, मर्कट-आदि शब्द एक ओर यदि द्राविड से आये हैं, तो वार, कम्बल, बाण, कोसल, अंग (स्थानवाली) आदि आस्ट्रिक भाषा से आये हैं।

(ङ) बोलियाँ :-

ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुसार वैदिक काल में प्राचीन आर्यभाषा के कम-से-कम तीन रूप- या बोलियाँ - पश्चिमोत्तरी, मध्यवर्ती, पूर्वी- अवश्य थे, अफगानिस्तान से लेकर पंजाब तक मश्चिमोत्तरी पंजाब से लेकर मध्य उत्तर प्रदेश तक मध्यवर्ती, उसके पूर्व पूर्वी थे। ऋग्वेद में पश्चिमोत्तरी बोली का ही प्रतिनिधित्व हुआ है। पश्चिमोत्तरी को उस समय 'उदीच्य' कहते थे।

2. लौकिक संस्कृत (800 ई.पू. से 500 ई. पू. तक)

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. विशेषताएँ
3. बोलियाँ

1. प्रस्तावना :-

संस्कृत शब्द का प्रथम प्रयोग वाल्मीकि रामायण में प्राप्त होता है। 'संस्कृत' का अर्थ- है संस्करित, शिष्ट या अप्रकृत भाषा । वैदिक काल में इस भाषा के तीन- उत्तरी, मध्य देशी, पूर्वी - भौगोलिक रूपों का उल्लेख किया गया है। लौकिक संस्कृत का मूल आधार उत्तरी बोली मानी जाती है। पाणिनि ने अन्यों के भी कुछ रूप लेकर उनको वैकल्पिक कहा है। मध्य देशी तथा पूर्वी का भी संस्कृत पर कुछ प्रभाव है। लौकिक या संस्कृत साहित्यिक भाषा है। जिस प्रकार हिन्दी में जयशंकर प्रसाद की गद्य या पद्य- भाषा को बोलचाल की भाषा नहीं कह सकते, उसी प्रकार संस्कृत को भी बोलचाल की भाषा नहीं कह सकते। जिस प्रकार प्रसाद जी की भाषा का आधार मानक खडी बोली हिन्दी है उसी प्रकार पाणिनीय संस्कृत भी तत्कालीन पण्डित-समाज की बोलचाल की भाषा पर ही आधारित है। पाणिनि द्वारा उसके लिए 'भाषा' (भाषा = बोलना) शब्द का प्रयोग हुआ।

2. विशेषताएँ :-

1. लौकिक संस्कृत का मानकीकरण (Standardisation) हुआ था।
2. भाषा की जटिलता कम होकर एकरूपता आ गयी।
3. 'लृ', 'ऋ', 'ॠ' का उच्चारण स्वरवत् होता था। लौकिक संस्कृत में उनका उच्चारण 'लि', 'रि','री', जैसा होने लगा।
4. 'ऐ', 'ओ' का उच्चारण वैदिक में 'आइ', 'आउ' था। किन्तु, लौकिक संस्कृत में ये 'अइ', 'अउ' हो गये।
5. 'ए', 'ओ', का उच्चारण वैदिक (संस्कृत) में 'अइ', 'अउ', था। अर्थात ये संयुक्त स्वर मूलस्वर हो गये।
6. लेखन में ळ् और ळ्ह अक्षर समाप्त होकर उनके स्थान पर ड़, ढ़ प्रयुक्त होने लगे।
7. अनेक ध्वनियों के उच्चारण स्थान में अन्तर आ गया। ल, स दंतमूलीय अक्षर संस्कृत में आकर दन्त्य हुए।
8. वैदिक साहित्य में संगीतात्मक स्वराघात था। लौकिक संस्कृत में कलात्मक स्वराघात विकसित हुआ।
9. क्रियारूपों में लुङ्, लङ्, लिट् में कुछ परिवर्तन आगये।
10. वैदिक में छोटे-छोटे समासों के बदले संस्कृत में बडे-बडे समस्तपद आने लगे। तत्पुरुष , कर्मधारय, बहुव्रीहि, द्वन्द्व के साथ द्विगु और अव्ययीभाव भी प्रयुक्त होने लगे।
11. वैदिक संस्कृत में उपसर्ग स्वच्छन्दता से कहीं भी आ सकता है, किन्तु लौकिक संस्कृत में यह स्वच्छन्दता नहीं मिलती ।
12. वैदिक संस्कृत में विजातीय शब्द आये थे - विशेषत: द्रविड एवं ऑस्ट्रिक से। किन्तु लौकिक संस्कृत में उनकी संख्या दो हजार तक बढ़ गई थी।

(क) द्रविड शब्द :- संस्कृत में द्रविड से एक हजार से बढ़कर आये हैं।

उदा :- कीर (तोता), कुक्कुट (मुर्ग), कुक्कर (कुत्ता), धुण (धुन), नक्र (घडियाल), मर्कट (बन्दर) मीन (मछली), कानन (जंगल)

(ख) ऑस्ट्रिक शब्द :-

संस्कृत में ऑस्ट्रिक के शब्द सौ से ऊपर हैं।

उदा :- ताम्बूल, श्रृंगार, आकुल, आपीड (मुकुट) कबरी (बाल), कुविन्द (जुलाहा) आदि।

(ग) यूनानी शब्द :-

यूनानी शब्द भी संस्कृत में बहुत- से आये हैं।

उदा :- यवन, यवनिका, द्रम्म (दाम), होडा, त्रिकोण, सुरंग, क्रमेल (ऊँट) आदि।

(घ) रोमन शब्द :-

उदा :- दीनार

(ङ) अरबी शब्द :-

उदा :- रमल, इक्कबाल, इत्यशाल, ईसराफ, वोल्लाह (विशेष रंग का घोडा) आदि।

(च) ईरानी शब्द :-

उदा :- हिन्दू, बारबाण, ताजिक (ईरानी व्यक्ति): मिहिर (सूर्य) बादाम (मेवा विशेष), बालिश (तकिया), खोल (खर्बूजा), नि:शाण (जुलूस) आदि।

(छ) तुर्की शब्द :-

उदा :- तुरुष्क, खच्चर।

(ज) चीनी शब्द :-

उदा :- चीन (चीनांशुक, चीनचोलक), मसार (एक रत्न)

3. बोलियाँ :-

वैदिक भाषा में पश्चिमोत्तरी, मध्यदेशी तथा पूर्वी बोलियों का उल्लेख है। प्राय: संस्कृत काल में आर्यभाषा - भाषी प्रदेश में कदाचित एक दक्षिणी रूप में भी जन्म ले चुका था।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.2. 'पालि' भाषा के उद्भव (उद्गम) तथा विकास क्रम पर प्रकाश डालिए।

रूपरेखा :-

1. **प्रस्तावना**
2. **'पालि' शब्द की व्युत्पत्ति**
3. **'पालि' भाषा का प्रदेश**
4. **साहित्य**
5. **ध्वनियाँ**
6. **स्वराघात**
7. **व्याकरण**
8. **बोलियाँ एवं भाषा- रूप**

1. प्रस्तावना :-

'पालि' भाषा प्रथम प्राकृत (500 ई. पू. से. 1 ई. तक) कहलाती है। पालि बौद्ध धर्म, विशेषत: दक्षिणी बौद्धों की भाषा है। 'पालि' शब्द का प्राचीनतम प्रयोग चौथी सदी में लंका में लिखित ग्रन्थ 'दीपबंस' में प्राप्त होता है। वहाँ इसका अर्थ 'बुद्धवचन' है। तत्पश्चात 'पालि' शब्द का प्रयोग पालि साहित्य में हुआ है, किन्तु भाषा के अर्थ में नहीं। भाषा के अर्थ में वहाँ मगध भाषा, मागधी, मागधिक भाषा आदि का प्रयोग हुआ है। सिंहल के लोग 'पालि' को अब भी मागधी कहते हैं।

2. 'पालि' शब्द की व्युत्पत्ति :-

भाषा के अर्थ में पालि का प्रयोग आत्याधुनिक है और यूरोप के लोगों द्वारा हुआ है। बिधुशेखर भट्टाचार्य 'पालि' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत 'पंक्ति' शब्द से है (पंक्ति> पति> पट्ठि> पल्लि>पालि)। कुछ विद्वानों के अनुसार वैदिक और संस्कृत आदि की तुलना में यह 'पल्लि' या गाँव की भाषा थी। अत: 'पालि' शब्द 'पल्लि' का ही विकास है। डॉ. मैक्स-

वेलेसर के अनुसार 'पालि', 'पाटलि' (पाटलिपुत्र की भाषा) से उत्पन्न है। सब से प्रमाणिक व्युत्पत्ति (au thantie development) भिक्षु जगदीश कश्यप द्वारा दी गई है। इस के अनुसार 'पालि' का सम्बन्ध परियाय (पर्याय) से है। 'घम्म-परियाय' या 'परियाय' का प्रयोग प्राचीन बौद्ध साहित्य में बुद्ध के उपदेश के लिए मिलता है। इन की विकास परम्परा परिचय > पलियाय> पालियाय> पालि है।

3. 'पालि' भाषा का प्रदेश :-

'पालि' के प्रदेश पर बहुत से विचार प्रस्तुत होते हैं। श्रीलंका के बौद्धों तथा चाइल्डर्स के अनुसार 'पालि' मगध की बोली थी। किन्तु भाषा की विवेचना करने पर यह बात अशुद्ध ठहरती है। ध्वनि और व्याकरण की दृष्टि से इसका मागधी से साम्य नहीं है। बेस्टरगार्ड और स्टेनकोनो के अनुसार पालि उज्जइनी या विन्ध्यप्रदेश की बोली पर आधारित है। ग्रियर्सन ने इसे मागधी मानकर, इस पर पैशाची का भी प्रभाव स्वीकार किया था। इन विविध मतों से स्पष्ट होता है कि पालि में विभिन्न प्रदेशों की बोलियों के तत्त्व हैं। वस्तुत: अपने मूल में पालि मध्यप्रदेश की भाषा है। उस में अनेक प्रादेशिक बोलियों का समावेश हुआ है; विशेषत: बुद्ध की अपनी भाषा होने से मागधी के भी कुछ तत्त्व मिल गये। इस प्रकार अपने मूल रूप में पालि को शौरसेनी प्राकृत का पूर्व रूप मान सकते हैं।

4. साहित्य :-

पालि साहित्य का सम्बन्ध प्रमुखत: भगवान बुद्ध से है। कोष छन्दश्शास्त्र तथा व्याकरण की भी कुछ पुस्तकें लिखी गयी हैं। पालि साहित्य का रचना-काल 483 ई.पू.से लेकर आधुनिक काल तक लगभग ढ़ाई हजार वर्षों में फैला हुआ है। परम्परागत रूप से पालि साहित्य पिटक और अनुपटिक दो वर्गों में बाँटा जाता है। उन में जातक, घम्मपद, मिलिन्दपञ्हो, बुद्धघोष की अट्टकथा, महावंश आदि प्रमुख हैं।

5. ध्वनियाँ :-

पालि के प्रसिद्ध वैयाकरण कच्चायन के अनुसार पालि में 41 ध्वनियाँ हैं। दूसरे प्रसिद्ध वैयाकरण मोग्गलान के अनुसार 43 ध्वनियाँ हैं। ध्वनि- विषयक कुछ विवरण।

1. स्वरों में हस्व एँ और ओँ दो ध्वनियाँ विकसित हुई हैं।
2. ऋ, ॠ, लृ, स्वर पूर्णत: समाप्त हो गये।
3. ऐ, औ स्वर नहीं रहै।
4. व्यंजनों में ळ, ळ्ह ध्वनियाँ थीं।
5. विसर्ग जिह्वामूलीय, ऊष्मानीय ध्वनियाँ नहीं रहीं।
6. श, ष, स के स्थान पर 'स' मात्र रह गया।
7. अनुस्वार स्वतन्त्र रूप से उच्चरित होने लगे।
8. विविधि ध्वनि परिवर्तन आ गये –

(क) घोषीकरण :-

उदा :- माकन्दिय – मागन्दिय

उताहो – उदाह्

(ख) अघोषीकरण :-

उदा :- मृदंग – मुर्तिग

परिघ –परिख

(ग) महाप्राणीकरण :-

उदा :- सुकुमार – सुखुमार

कील – खील

(घ) समीकरण :-

उदा :- चत्वर – चच्चर

धर्म – धम्म

कर्म – कम्म

(ङ) र-ल का आपसी परिवर्तन :-

उदा :- तरुण– तलुण

किल – किर

(च) महाप्राण का 'ह' हो जाना :-

उदा :- लघु– लहु

रधिर – रुहिर

6. स्वराघात --

पालि में स्वराघात की स्थिति विवादास्पद है। कुछ विद्वानों के अनुसार पालि में संगीतात्मक एवं कलात्मक होने की सम्भावना है।

7. व्याकरण :-

पालिभाषा व्याकरणिक दृष्टि से वैदिक संस्कृत की भाँति स्वच्छन्द एवं विविध रूपोंवाली है। इस भाषा के व्याकरण में पर्याप्त सरलीकरण हुआ है।

(क) व्यंजनान्त लोप :-

उदा :- विद्युत–विज्जु

(ख) सादृश्य :-

उदा :- अग्नि – अग्गि

भिक्षु – भिक्खु

(ग) पुल्लिंग का नपुंसक लिंग को प्रभावित करना :-

उदा :- सुखो

(घ) द्विवचन का न होना :-

उदा :- पालि में द्वि वचन नहीं है।

(ङ) रूपाधिक्य :-

उदा :- धर्मो–धम्मे, धम्मस्मि, धम्मम्हि

(च) मध्यम पुरुष बहु वचन 'य' के स्थान पर 'त' से प्रारम्भ होता है।

उदा :- युष्मे – तुम्हें

युष्माकम् – तुम्हाकं

(छ) क्रिया रूपों में 3 पुरुष और 2 वचन हैं। (द्विवचन नहीं है।)

8. बोलियाँ एवं भाषा रूप :-

पालिभाषा में चार बोलियाँ हैं – पश्चिमोत्तरी दक्षिणी, मध्यवर्ती तथा पूर्वी। प्रथम प्राकृत के अन्तर्गत अभिलेखी प्राकृत भी आती है जो शिलालेखी प्राकृत है। इसके दो रूप हैं–

1. अशोकी अभिलेख और
2. अशोकेतर अभिलेख।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.3. 'प्राकृत' भाषा के उद्‌भव (उद्‌गम) एवं विकासक्रम की समीक्षा कीजिए।

प्राकृत - (1ई. - 500 ई.)

रूपरेखा :-

1. **प्रस्तावना**
2. **प्राकृत भाषा के भेद**

(क)	**शूर सैनी**	**(च)**	**केकय**
(ख)	**पैशाची**	**(छ)**	**टक्क**
(ग)	**महाराष्ट्री**	**(ज)**	**खस**
(घ)	**अर्धमागधी**	**(झ)**	**ब्राचड**
(ङ)	**मागधी**		

3. **प्राकृत की कुछ सामान्य विशेषताएँ**

1. प्रस्तावना :-

'संस्कृत' पण्डितों की भाषा मानी जाती थी। प्रकृतिजन्य तथा असंस्कृत, जनभाषा 'प्राकृत' कहलाती थी। यह सामान्य लोगों की भाषा थी। तत्कालीन जनभाषा से उद्‌भूत या विकसित रूप प्राकृत है । प्राकृत भाषा तीन कालों में विभाजित की गयी है–

(क) प्रथम प्राकृत (500 ई.पू. से 1 ई. तक) :-

इसके अन्तर्गत पालि तथा अभिलेखी प्राकृत आती हैं।

(ख) द्वितीय प्राकृत (1 ई. से 500 ई. तक)

इसके अन्तर्गत भारत एवं भारत के बाहर प्रयुक्त विभिन्न धार्मिक, साहित्यिक और अन्य प्राकृत भाषाएँ आती हैं।

(ग) तृतीय प्राकृत (500ई. से. 1000 ई. तक) :-

इसके अन्तर्गत अपभ्रंश आती है।

द्वितीय प्राकृत के लिए ही प्राकृत नाम का प्रयोग अधिकतः होता है।

2. प्राकृत भाषा के भेद :-

धर्म, प्रदेश, प्रयोग, लेखन– आधार आदि के आधार पर प्राकृत भाषा के विविध भेद हैं। उन में मुख्यतः शौरसेनी, पैशाची, महाराष्ट्री, अर्धमागधी, मागधी, केकय, टक्क, ब्राचड, खस आदि हैं।

(क) शौरसेनी :-

यह मूलतः मथुरा या शूरसेन के आसपास की बोली थी। मध्यदेश की भाषा होने के कारण इसे कुछ लोग संस्कृत की भाँति उस काल की मानक भाषा (Standard Language) मानते हैं। मध्यदेश संस्कृत का केन्द्रे था। इसी कारण शौरसेनी उससो बहुत प्रभावित है। संस्कृत नाटकों के गद्य की भाषा शौरसेनी ही है। कर्पूरमंजरी और अश्वघोष के नाटकों में शौरसेनी का प्राचीनतम रूप मिलता है। शौरसेनी में तत्सम शब्द अपेक्षाकृत अधिक हैं। जैनों ने अपने साम्प्रदायिक ग्रन्थों के लेखन में भी इसका प्रयोग किया है।

शौरसेनी की प्रमुख विशेषताएँ :-

1. असंयुक्त तथा दो स्वरों के बीच में आनेवाला संस्कृत ‘त’ इस में ‘द’ हो गया है और ‘थ’ ‘ध’ हो गया है।

उदा :- गच्छति –गच्छदि

कथम – कधीहि।

2. ‘क्ष’ क विकास सामान्यतः ‘ख’ में हुआ है।

उदा :- इक्षु – इक्खु

कुक्षि – कुक्खि

3. **'ऋ' का विकास 'इ' में हुआ है।**

उदा :- गृद्ध - गिद्ध

4. **संयुक्त व्यंजनों का सरलीकरण हुआ है।**

उदा :- उत्सव-उस्सव - ऊसव

5. **आदरार्थ शब्दों का परिवर्तन :-**

उदा :- वर्तते - वट्टे।

6. **रूपों की दृष्टि से कुछ शब्द संस्कृत की ओर और कुछ शब्द महाराष्ट्री की ओर झुकी है।**

(ख) पैशाची :-

महाभारत में 'पिशाच' जाति का उल्लेख है। वे उत्तर-पश्चिम में कश्मीर के पास रहते थे। ग्रियर्सन के अनुसार पैशाची 'दरद' से प्रभावित भाषा है। हार्नल के अनुसार यह द्रविडों द्वारा प्रयुक्त भाषा है। पुरुषोत्तम देव के अनुसार यह संस्कृत और शौरसेनी का विकृत रूप है। गुणाढ्य की 'बृहत्कथा' इसी भाषा में लिखी गयी थी। अब उसके केवल-बृहत्कथामंजरी और कथा सरित्सागर शेष हैं।

देस्वरों के बीच में आनेवाले स्पर्शवर्गों के तीसरे और चौथे घोष व्यंजन अघोष में परिवर्तित होना इस भाषा की विशेषता है।

उदा :- गगन - गकन

मेघ - मेखो

दामोदर - तामोतर

राजा - राचा

(ग) महाराष्ट्री :-

प्राकृत साहित्य की दृष्टि से महाराष्ट्री बहुत धनी है। यह काव्य-भाषा रही है। गाहा सत्तसई (हाल), रावणवहो (रावरसेन) तथा वज्जालग्ग (जयवल्लभ) इसकी अमर कृतियाँ हैं।

1. महाराष्ट्री में दो स्वरों के बीच आनेवाले अल्पप्राण स्पर्श प्रायः लुप्त हो जाते हैं।

उदा :- प्राकृत - पाउऊ

गच्छति - गच्छइ

2. महाप्राण स्पर्श का केवल 'ह' रह जाता है।

उदा :- क्रोधः - कोहो

कथयति - कहेइ

मुख - मुह

3. ऊष्मध्वनियों का प्रायः 'ह' हो जाता है।

उदा :- तस्य - ताह

पाषाण - पाहाण

(घ) अर्धमागधी :-

अर्धमागधी का क्षेत्र मागधी और शौरसेनी के बीच में है। यह प्राचीन कोसल आसपास की भाषा है। इस में मागधी की प्रवृत्तियाँ पर्याप्त मात्रा में और कुछ शौरसेनी की मिलती हैं। इस लिए इसका नाम अर्धमागधी है। इसका प्रयोग मुख्यतः जैन साहित्य में हुआ है।

भाषागत विशेषताएँ :-

1. ष् और श् के स्थान पर प्रायः 'स्' का प्रयोग।

उदा :- शावक - सावग

वर्ष - वास

खुश - खुस

2. दन्त्य का मूर्घन्य ध्वनि में बदलना :-

उदा :- स्थित – ठिय

कृत्वा – कट्टु

3. चवर्ग के स्थान पर कहीं - कहीं तवर्ग का प्रयोग होता है।

उदा :- चिकित्सा – तेइच्छ।

4. स्वरों के बीच स्पर्श का लोप होकर 'य' श्रुति मिलना।

उदा :- सागर – सायर

5. गद्य और पद्य की भाषा का अन्तर।

(ङ) मागधी :-

मगध के आसपास की भाषा मागधी है। इस भाषा में कोई स्वतन्त्र रचना नहीं मिलती। संस्कृत नाटकों में निम्न श्रेणी के पात्र इसका प्रयोग करते हैं। इस का प्राचीनतम रूप अश्वघोष में मिलता है।

प्रमुख विशेषताएँ :-

1. स,ष, के स्थान पर 'श' का प्रयोग होता है।

उदा :- सप्त–शत्त

पुरुष – पुलिश

2. 'र' का उच्चारण सर्वत्र ल हो जाता है।

उदा :- राजा – लाजा

3. प्रथमा एक वचन में संस्कृत अः के स्थान पर 'ए' मिलता है।

उदा :- देव: – देवे

स: – शे।

(च) केकय :-

केकय का क्षेत्र केकय प्रदेश था। आज वहाँ 'लहँदा' (पाकिस्तान में) बोली जाती है। इस भाषा की विशेषताओं के बारे में कुछ विशेष ज्ञात नहीं है।

(छ) टक्क :-

टक्क का मूलत: पंजाबी का क्षेत्र है। भारत का पंजाब और पाकिस्तान के पंजाब प्रान्त का कुछ भाग इस के अन्तर्गत आता है। इसके सम्बन्ध में कुछ विशेष ज्ञात नहीं है।

(ज) खस :-

हिमाचल प्रदेश, गढ़वाल, कुमाऊँ और नेपाल में बोली जानेवाली पहाडी बोलियों का विकास 'खस' अपभ्रंश से माना जाता है। शौरसेनी प्राकृत का एक उत्तरी रूप ही 'खस प्राकृत' मानी जाती है।

(झ) ब्राचड :-

यह अपभ्रंश की पूर्वजा प्राकृत मानी जाती है। इस प्राकृत के सम्बन्ध में विशेष ज्ञात नहीं है।

3. 'प्राकृत' की कुछ सामान्य विशेषताएँ :-

1. ध्वनि की दृष्टि से प्राकृत भाषाएँ पालि के पर्याप्त निकट है।
2. पालि में उत्ष्मों में केवल 'स' का प्रयग था। प्राकृत में पिशाचोत्तरी क्षेत्र में श, ष, स तीनों ही कुछ काल तक थे। पालि का प्रभाव बहुत से शब्दों पर है।
3. 'न' का विकास 'ण' के रूप में हुआ है।
4. ध्वनियों का विशेष विकासक्रम हुआ है।

उदा :- मूक: – मूगों

सागर – सा अर

मुख – मुह

कथा – कहा

5. प्राकृत भाषाओं में व्यंजनांत शब्द प्राय: नहीं हैं।
6. द्विवचन के रूपों का प्रयोग नहीं मिलता।
7. वैदिकी और संस्कृत संयोगात्मक भाषाएँ थीं। लेकिन प्राकृत अयोगात्मक या वियोगात्मक की ओर तेजी से बढ़ने लगी।

Lesson Writer

डॉ.शेख मौला अली

प्र. 4. 'अपभ्रंश' भाषा का उद्भव (उद्गम) बताकर उसके विकासक्रम पर झाँकी डालिए।

रूपरेखा :-

1. अपभ्रंश भाषा का उद्गम :-

तृतीय प्राकृत में 'अपभ्रंश' भाषा आती है। अपभ्रंश का अर्थ है - 'गिरा हुआ' 'बिगडा हुआ।' प्राकृत की तुलना में भी जिस भाषा में ध्वन्यात्मक तथा व्याकरणिक परिवर्तन हुआ है, वह 'अपभ्रंश' या 'अवहट्ठ' (अपभ्रष्ट) भाषा के नाम से प्रचलित हुई है। अपभ्रंश प्राकृत तथा आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के बीच की कडी (Link) है। हर आधुनिक भारतीय भाषा का जन्म किसी - न - किसी अपभ्रंश से हुआ है। भाषा के अर्थ में अपभ्रंश नाम का प्रयोग छटी सदी से प्रचलित हुआ है।

2. बोलियाँ :-

'प्राकृत-सर्वस्व, ग्रन्थ के अनुसार अपभ्रंश के 27 भेद माने जाते हैं। किन्तु मुख्य अपभ्रंश केकय, टक्क, ब्राचड, शौरसेनी, महाराष्ट्री, अर्धमागधी औरे मागधी मानी जाती हैं। (इन सभी बोलियों का विवरण पिछले प्रश्न के समाधान में 'प्राकृत' भाषा के अन्तर्गत दिया गया है। अगर यह प्रश्न पूछा जाय, तो उन सब का विवरण भी यहाँ देना चाहिए।) डॉ. चटर्जी के अनुसार 'खस' एक अपभ्रंश भाषा है, जो पर्वतीय क्षेत्रों में बोली जाती है। नामवर सिंह ने अपभ्रंश के दो भेद माने हैं। प्राकृतो और आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच की कडी के रूप में अपभ्रंश के 6-7 भेद माने जाते हैं।

3. अपभ्रंश की सामान्य विशेषताएँ :-

1. 'अ' का पूर्वी एवं पश्चिमी अपभ्रंशों में संवृत- विवृत का भेद था।
2. 'ऋ' का उच्चारण 'रि' जैसा होता था।
3. 'श' का प्रचार केवल मागधी में था।
4. 'ल' महाराष्ट्री मागधी, गुजरात, राजस्थान, बाँगडू और शौरसेनी में भी था।
5. स्वरों का अनुनासिक रूप प्रयुक्त होने लगा था।
6. संगीतात्मक स्वराघात समाप्त होकर कलात्मक स्वराघात विकसित हो चुका था।

7. अपभ्रंश एक उकार-बहुला भाषा थी।

उदा :- एकुकु, पियासु, अगु, मूलु, जगु,

8. ध्वनि-परिवर्तन की प्रवृत्तियाँ पालि में शुरू होकर, प्राकृत में विकसित हुई थीं, उन्हीं का अपभ्रंश में और विकास हुआ।

9. य - ज

   व - व

   म - वँ

   क्ष - क्ख या च्छ

   आदि अक्षरों का ध्वनि परिवर्तन या विकास हुआ था।

10. संस्कृत - प्राकृत - अपभ्रंश

    तस्य- तस्स- तासु

    के समीकरण में शब्दों का परिवर्तन हुआ।

11. भाषा काफी वियोगात्मक हुई।

12. नपुंसक लिगं समाप्त हो गया।

13. कारकीय आदि रूपों की कम हो गयी।

4. अवहट्ठ :-

कुछ विद्वानों के अनुसार अपभ्रंश और आधुनिक भाषाओं के बीच की कडी 'अवहट्ठ' कहलाती है। लेकिन डॉ. भोलानाथ तिवारी का कथन है - ''मूलत: संस्कृत से भ्रष्ट हुई भाषा 'अपभ्रंश' शब्द का विकास 'अवहंस' रूपे में हुआ और 'अपभ्रष्ट' का विकास 'अवहट्ठ' रूप में हुआ था। अत: 'अपभ्रंश' और 'अवहट्ठ' एक ही भाषा के दो नाम हैं।''

5. अपभ्रंश से उत्पन्न आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ ।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का उद्‌भव विभिन्न क्षेत्रीय अपभ्रंश भाषाओं से हुआ था।

अपभ्रंश **आधुनिक भाषाएँ तथा उपभाषाएँ**

1. शौरसेनी - पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, पहाडी, गुजराती
2. केकय - लहँदा
3. टक्क - पंजाबी
4. ब्राचड - सिंधी
5. महाराष्ट्री - मराठी
6. मागधी - बिहारी, बंगाली, उडिया, असमिया
7. अर्धमागधी - पूर्वी हिन्दी

इस प्रकार हिन्दी भाषा का उद्‌भव अपभ्रंश के शौरसेनी, मागधी, तथा अर्धमागधी रूपों से हुआ था।

Lesson Writer

डॉ. शेखमौला अली